गृत्समद (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद्) भार्गवः शौनकः।इन्द्रः। जगती, ९ त्रिष्टुप्

**प्र वः सतां ज्येष्ठतमाय सुष्टुतिमग्नाविव समिधाने हविर्भरे।**

**इन्द्रमजुर्यं जरयन्तमुक्षितं सनाद्युवानमवसे हवामहे॥ २.०१६.०१**

समिधाने- सम्यगुद्दीपिते। हविर्भरे- हव्यधारके। अग्नाविव- पावक इव। वः- युष्माकम्। सताम्- साधूनाम्। ज्येष्ठतमाय- उत्तमाय। सुष्ठुतिम्- सुस्तुतिम्। प्र- प्रकर्षेण वदामः। अजुर्यं- अजीर्णम्। जरयन्तम्- रसनिष्पादकम्। उक्षितम्- वर्षकम्। सनाद्युवानम्- सनातनतरुणम्। इन्द्रम्- परमेश्वरम्। अवसे- रक्षायै। हवामहे- आह्वयामः ॥१ ॥

**यस्मादिन्द्राद्बृहतः किं चनेमृते विश्वान्यस्मिन्सम्भृताधि वीर्या।**

**जठरे सोमं तन्वी३ सहो महो हस्ते वज्रं भरति शीर्षणि क्रतुम्॥ २.०१६.०२**

यस्मात्। बृहतः- महात्मनः। ते। इन्द्रात्- परमेश्वरात्। ईम्- इदं जगत्। किं चन- किमपि न भवति। अस्मिन् अधि- तस्मिन्निन्द्रे। विश्वानि- सर्वाणि। वीर्या- वीर्याणि। संभृता- संभृतानि। सोमम्- रसम्। जठरे- उदरोपलक्षितहृदये। सीदन् वनस्य जठरे पुनानः, भीमस्य वृष्णो जठरादभिश्वसो दिवे दिवे सहुरिः स्तन्नबाधित इत्यादिषु मन्त्रेषु जठरशब्दस्य मध्यभाग इति लक्षणया सारः स्वरूपं हृदयमिति वार्थः। हूयमानः- अस्माभिराहूतः। तन्वी- देहे। महः- महती। सहः- सहनशक्तिः। हस्ते- बाहौ। वज्रम्- स्वायुधम्। भरति- धरति। शीर्षणि- शिरसि शिरसेति भावः। क्रतुम्- प्रज्ञानं भरति ॥२ ॥

**न क्षोणीभ्यां परिभ्वे त इन्द्रियं न समुद्रैः पर्वतैरिन्द्र ते रथः।**

**न ते वज्रमन्वश्नोति कश्चन यदाशुभिः पतसि योजना पुरु॥ २.०१६.०३**

Dr. Ranganji

WEBOLIM

ते- तव। इन्द्रियम्- परमैश्वर्यम्। क्षोणीभ्याम्- द्यावापृथिवीभ्याम्। न परिभ्वे- न परिभवनीयम्। ते- तव। रथः- रंहणम्। रथी ऋतस्य नो भवेति श्रुतेः ऋतं रथः। इन्द्र- परमेश्वर। न। समुद्रैः- अर्णवैः। न। पर्वतैः- गिरिभिः परिभवनीयम्। यत्- यदा। आशुभिः- क्षिप्रगामिभिरश्वैः प्राणप्रतीकैः। पुरु योजना- बहुदूरम्। पतसि- सरसि तदा। ते- तव। वज्रम्- आयुधम्। कश्चन- कोपि। न अन्वश्नोति- नाक्रमते॥३॥

**विश्वे ह्यस्मै यजताय धृष्णवे क्रतुं भरन्ति वृषभाय सश्चते।**
**वृषा यजस्व हविषा विदुष्टरः पिबेन्द्र सोमं वृषभेण भानुना॥ २.०१६.०४**

विश्वे- सर्वे। हि- खलु। अस्मै- एतस्मै। यजताय- दात्रे। धृष्णवे- धर्षकाय। वृषभाय- वर्षकाय। शश्वते- शाश्वताय। क्रतुम्- प्रज्ञां सङ्कल्पं वा। भरन्ति। वृषा- वर्षकः सन्। विदुष्टरः- अतिशयेन जानन्। हविषा- चरुपुरोडाशध्यानभावनादिहव्येन। यजस्व- हे यजमान इन्द्रं पूजय। इन्द्र- परमेश्वर। वृषभेण- वर्षकेण। भानुना- स्वतेजसा। सोमम्- रसम्। पिब- अनुभव॥४॥

**वृष्णः कोशः पवते मध्व ऊर्मिर्वृषभान्नाय वृषभाय पातवे।**
**वृषणाध्वर्यू वृषभासो अद्रयो वृषणं सोमं वृषभाय सुष्वति॥ २.०१६.०५**

वृषभान्नाय- वर्षकभोगप्रदाय। वृषभाय- वर्षकाय। पातवे- अनुभूतये। वृष्णः- वर्षकः। कोशः- कोशस्थः। मध्वः- मधुरः। ऊर्मिः- लहरीमयो रसः। पवते- सरति। अध्वर्यू- ध्वररहितकर्मकामावश्विनौ प्राणेशौ। वृषणा- वर्षकौ। अद्रयः- जडप्रतीकाः स्थैर्यप्रतीका वा ग्रावाणः। वृषभासः- वर्षकाः। वृषणम्- वर्षकम्। सोमम्- रसम्। वृषभाय- वर्षकाय। सुष्वति- सुन्वन्ति॥५॥

**वृषा ते वज्र उत ते वृषा रथो वृषणा हरी वृषभाण्यायुधा।**
**वृष्णो मदस्य वृषभ त्वमीशिष इन्द्र सोमस्य वृषभस्य तृप्णुहि॥ २.०१६.०६**

Dr. Rangaji
WEBOLIM

ते- तव। वज्रः। वृषा- वर्षकम्। उत- अपि च। ते- तव। रथः- लक्ष्योद्देशरंहणप्रतीकवाहनम्। रथी ऋतस्य नो भवेति श्रुतेः ऋतं रथः। वृषा- वर्षकम्। हरी- आकर्षणशक्तिप्रतीकाश्वौ। वृषणा- वर्षकौ। आयुधा- आयुधानि च। वृषभाणि- वर्षकाणि। वृषभ- वर्षक। वृष्णः- वर्षकस्य। मदस्य- रसस्य। त्वम्। ईशिषे- स्वामित्त्वं वहसि। इन्द्र- परमेश्वर। वृषभस्य- वर्षकेण। सोमस्य- रसेन। तृष्णुहि- तृप्तिं प्राप्नुहि ॥६ ॥

**प्र ते॒ नावं॒ न सम॑ने वच॒स्युवं॒ ब्रह्म॑णा यामि॒ सव॑नेषु॒ दाधृ॑षिः।**
**कु॒विन्नो॑ अ॒स्य वच॑सो नि॒बोधि॑ष॒दिन्द्र॒मुत्सं॒ न वसु॑नः सिचामहे॥ २.०१६.०७**

दाधृषिः- अन्तरायधर्षकः सन्। सवनेषु- सम्भजनात्मकोपासनेषु। समने- अन्तरायैर्जनितयुद्धे। वचस्युवम्- मन्त्रकामम्। नावं न- नौकामिव तारकम्। ते- त्वाम्। ब्रह्मणा- मन्त्रेण। प्र यामि- प्रपन्नोस्मि। अस्य- एतम्। नः- अस्माकम्। वचसः- मन्त्रम्। कुवित्- बहु। निबोधिषत्- बुध्यताम्। उत्सं न- उदकनिधानं कूपमिव। वसुनः- निधानभूतम्। इन्द्रम्- ईशनाधिदैवतम्। सिचामहे- रसेन सिञ्चामः। सिचिर् क्षरणे ॥७ ॥

**पु॒रा स॑म्बा॒धाद॒भ्या व॑वृत्स्व नो धे॒नुर्न व॒त्सं यव॑सस्य पि॒प्युषी॑।**
**स॒कृत्सु ते॑ सुम॒तिभि॑ः शतक्रतो॒ सं पत्नी॑भि॒र्न वृष॑णो नसीमहि॥ २.०१६.०८**

यवसस्य पिप्युषी- घासपुष्टा। धेनुः- गौः। वत्सम्। न- इव। संबाधात्- दुःखबाधात्। पुरा। अभ्या ववृत्स्व- अभ्यावर्तय। शतक्रतो- अनन्तसङ्कल्प। वृषणः- युवानः। पत्नीभिः- स्वजायाभिः। न- इव। ते- तव। सुमतिभिः। सम्- सम्यक्। सकृत्- ऐकाग्र्येण। नसीमहि- व्याप्येमहि ॥८ ॥

**नू॒नं सा ते॒ प्रति॒ वरं॑ जरि॒त्रे दु॑ही॒यदि॑न्द्र॒ दक्षि॑णा म॒घोनी॑।**
**शिक्षा॑ स्तो॒तृभ्यो॒ माति॑ ध॒ग्भगो॑ नो बृ॒हद्व॑देम वि॒दथे॑ सु॒वीराः॑॥ २.०१६.०९**

Dr. Rangaji
WEBOLIM

पूर्वं व्याख्यातम् (२.०११.२१) ॥९॥

Dr. Ranganji

WEBOLIM